IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 13, May 2026 Impact Factor: 8.2

प्रगतिवादी काव्य में विविध आयाम

डॉ. देशपति सार्मे
प्राध्यापक हिन्दी विभाग
शासकीय महाविद्यालय पुश्पराजगढ़
जिला शहडोल (म.प्र.)

अनिरूद्ध पाल
शोधार्थी हिन्दी विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय
रीवा (म.प्र.)

'kkèk lkjk'k

प्रगतिवादी काव्यधारा हिंदी साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण साहित्यिक आंदोलन के रूप में स्थापित हुई। इसका उद्‌भव बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों की पृष्ठभूमि में हुआ। सन् 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना के साथ इस आंदोलन को संगठित स्वरूप प्राप्त हुआ। प्रगतिवादी काव्य का मुख्य उद्देश्य साहित्य को जनजीवन से जोड़ना तथा शोषित, पीड़ित और श्रमिक वर्ग की समस्याओं को अभिव्यक्ति देना था। प्रगतिवादी काव्य के विविध आयामों का अध्ययन किया गया है। प्रगतिवादी काव्य का पहला प्रमुख आयाम सामाजिक यथार्थवाद है। इस धारा के कवियों ने समाज में व्याप्त गरीबी, बेरोजगारी, वर्ग–संघर्ष, जातिगत भेदभाव तथा शोषण को अपनी कविताओं का विषय बनाया। किसानों और मजदूरों के जीवन–संघर्ष को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया गया। नागार्जुन, त्रिलोचन तथा केदारनाथ अग्रवाल जैसे कवियों ने जनजीवन की वास्तविक समस्याओं को काव्य में स्थान दिया। दूसरा महत्वपूर्ण आयाम राजनीतिक चेतना है। प्रगतिवादी कवियों ने औपनिवेशिक शासन, साम्राज्यवाद तथा पूँजीवादी व्यवस्था का विरोध किया। स्वतंत्रता आंदोलन और सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा उनके काव्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। राष्ट्रवाद, लोकतंत्र तथा समानता की भावना को प्रगतिवादी काव्य ने व्यापक रूप से अभिव्यक्त किया। इस काव्यधारा में साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का साधन माना गया। तीसरा आयाम मानवतावाद और जनपक्षधरता है। प्रगतिवादी कवियों ने मनुष्य को केंद्र में रखकर उसकी पीड़ा, संघर्ष और सपनों को स्वर दिया। स्त्री, दलित तथा श्रमिक वर्ग के प्रति सहानुभूति और सम्मान की भावना इस काव्यधारा की विशेषता रही। मानव–मुक्ति और सामाजिक न्याय की स्थापना इसका मूल उद्देश्य रहा। इस दृष्टि से प्रगतिवादी काव्य केवल साहित्यिक आंदोलन नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का आंदोलन भी था। चौथा आयाम भाषा और शिल्प से संबंधित है। प्रगतिवादी कवियों ने क्लिष्ट और अलंकारिक भाषा के स्थान पर सरल, सहज और जनभाषा का प्रयोग किया। लोकजीवन से जुड़े प्रतीकों और बिंबों का उपयोग करके कविता को आम जनता के निकट लाने का प्रयास किया गया। इससे हिंदी कविता में अभिव्यक्ति की नई शैली विकसित हुई। अंततः यह कहा जा सकता है कि प्रगतिवादी काव्य हिंदी साहित्य की ऐसी सशक्त धारा है जिसने साहित्य को समाज से जोड़ने का कार्य किया। इसके विविध आयामकृसामाजिक यथार्थ, राजनीतिक चेतना, मानवतावाद, जनपक्षधरता तथा सरल अभिव्यक्तिकृआज भी प्रासंगिक हैं। यह काव्यधारा केवल साहित्यिक सौंदर्य तक सीमित न रहकर सामाजिक परिवर्तन और मानवीय मूल्यों की स्थापना की प्रेरणा देती है।

e[; “kCn %& ixfrokfnh dk0;] lkfgfR;d vkanksyu] fofo/k vk;ke] jktuhfrd] xjhch] cjkstxkjh vkfnA

iLrkouk %&

हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रगतिवादी काव्यधारा एक महत्वपूर्ण साहित्यिक एवं वैचारिक आंदोलन के रूप में प्रतिष्ठित है। यह धारा केवल काव्य की अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रही, बल्कि सामाजिक परिवर्तन, जनचेतना और मानवतावादी मूल्यों की स्थापना का सशक्त माध्यम बनी। बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में जब भारतीय समाज आर्थिक विषमता, औपनिवेशिक शोषण, सामाजिक रूढ़ियों तथा वर्ग–संघर्ष से जूझ रहा था, तब साहित्यकारों ने साहित्य को जनजीवन से जोड़ने की आवश्यकता अनुभव की। इसी पृष्ठभूमि में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई और हिंदी साहित्य में प्रगतिवादी आंदोलन का सूत्रपात हुआ।

प्रगतिवादी काव्य का मूल उद्देश्य समाज के शोषित, पीड़ित, श्रमिक एवं किसान वर्ग की समस्याओं को अभिव्यक्ति देना तथा साहित्य को जनसामान्य के जीवन से जोड़ना था। इस काव्यधारा के कवियों ने सामाजिक यथार्थ को केंद्र में रखकर मानव जीवन के संघर्ष, अभाव, अन्याय और असमानता को स्वर प्रदान किया। प्रगतिवादी कवियों ने साहित्य को केवल मनोरंजन का

DOI: 10.48175/IJARSCT-36061

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 13, May 2026 Impact Factor: 8.2

साधन न मानकर सामाजिक परिवर्तन का प्रभावशाली माध्यम माना। इस धारा में वर्ग–संघर्ष, राष्ट्रवाद, समानता, स्वतंत्रता, मानवतावाद तथा जनपक्षधरता जैसे तत्वों का व्यापक समावेश हुआ। नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल तथा रामधारी सिंह दिनकर जैसे कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से सामाजिक चेतना को जागृत किया। इन कवियों की कविताओं में श्रमिकों, किसानों, दलितों और उपेक्षित वर्गों के जीवन का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है। साथ ही, प्रगतिवादी काव्य ने भाषा और शिल्प की दृष्टि से भी नवीनता प्रदान की। सरल, सहज और जनभाषा का प्रयोग करके कविता को आम जनता के निकट लाने का प्रयास किया गया।

"प्रगतिवादी काव्य में विविध आयाम" विषय का अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह काव्यधारा केवल साहित्यिक प्रवृत्ति न होकर सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक चेतना की प्रतिनिधि रही है। इसके अंतर्गत सामाजिक यथार्थवाद, राजनीतिक चेतना, मानवतावाद, स्त्री–विमर्श, वर्ग–संघर्ष, जनवादी दृष्टिकोण तथा भाषा–शिल्प की नवीनता जैसे अनेक आयाम समाहित हैं। प्रस्तुत अध्ययन में प्रगतिवादी काव्य के इन्हीं विविध पक्षों का विश्लेषण करते हुए उसकी साहित्यिक एवं सामाजिक प्रासंगिकता को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा।

आधुनिक युग में द्वितीय दशक 1930 से लेकर 1940 ई0 के बीच हिन्दी साहित्य का काव्यधारा का प्रवाह मिलता है। जिसे प्रगतिवाद के नाम से जाना जाता है। इस साहित्य में प्राचीन सामाजिक रूढ़ियों धार्मिक मान्ताओं, आथिकि परिस्थितियों आदि को रचना का विषय बनाया गया। इसे ही प्रगति कहा गया और ऐसे साहित्य को प्रगतिवादी की सज्ञा से अभिहित किया गया है। इस युग में रामकृष्ण मिशन आर्य समाज आदि संस्थाओं ने समाज सुधार जैसे महत्वपूर्ण कार्य किया जिससे समाज प्रगति की ओर अग्रसर कर सके। प्रगतिवादी कवियों व्यपाक सामाजिक चेतना के विचार परिलिक्षित होते है।

ukjh Hkkouk&

तत्कालीन समय में स्त्रियों को मानसिक एवं शारीरिक दोहरे शोषण का शिकार होना पड़ता था। स्त्रियों की स्वयं की इच्छा कोई महत्व नही रखती थी उसे पुरुष की इच्छा को ही स्वीकारना पड़ता था। चाहे वह पिता के घर में हो या पति के। स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा अधिक कार्य भी करना पड़ता था और इसके बाद यौन शोषण का शिकार भी होना पड़ता था। वेश्या यौन शोषित नारी का सबसे वीभत्स रूप है। एक ऐसा कोढ़ है जिससे विश्व का कोई भी देश अछूता नही रहा है। प्रगतिवादी कविता में नारी शोषण के सन्दर्भ में वेश्या जीवन को सर्वाधिक संवेदनाएं दी गई हैं। इस विषय पर श्री विजय चन्द्र जी ने एक महत्वपूर्ण काव्य उपन्यास लिखा था जो वेश्या जीवन के समग्र चित्रण एवं क्रूर विश्लेषण की अनोखी कृति है। इस उपन्यास में बहुत ही विस्तृत वर्णन करते हुए वैश्या–जीवन की लगभग समस्त स्थितियों एवं अवस्थाओं का एक ठोस प्रामाणिक एवं यथार्थवादी चित्रण वेश्यावृत्ति की समस्या को उसकी निश्चित सामाजिक आर्थिक प्रष्ठभूमि में रखकर किया गया है। आदिकाल से ही चले आ रहे नारी के इस शोषित रूप, उनकी वीभत्स जीवन परिस्थितियों और उस व्यवस्था के प्रति जो इसकी जिम्मेंदार है, सच्ची भावना से सृजित यह काव्य उनके प्रति निर्मम घृणा व तीव्र आक्रोश जगाता है। वेश्या जीवन के विषय में लिखते हैं :–

कुरूप गन्दी, सामने खड़ी,
भौंड़े तरीके से मुस्काराती,
सीधे भद्दे संकेतों से बुलाती,
उखड़े परों वाली, सभ्यता, समाज, काला, सुन्दरता की–
सबसे बड़ी गाली, मूक भारती हुई।''

नारी कीवेश्या बनने की परिस्थितियाँ निः सन्देह भयावह होती हैं। प्रगतिवादी काव्य के कवि का कहना है किकौड़ी–कौड़ी के लिए तन का सौदा करना वेश्या जीवन का कटु सत्य है। अपना पेट पालने के लिए उसे प्रायः एक ही दिन में कई अपरिचित पुरुषों से संसर्ग करना पड़ता है। जिसकी पीड़ा अनुभव गम्य है, अकथनीय है। मानवता यहाँ अस्तित्वहीन, मूक दर्शक होकर रह जाती है। इस सब के बावजूद उसके सामने सबसे विकट समस्या तब आती है, जब वह गर्भवती हो जाती है। गर्भवती होने परएक ओर तो वह पुरुष की उपेक्षा का शिकार होती है, दूसरे वह अपने बच्चे को पिता का नाम न दे पाने के कारण उसे पैदा करने में भी अपने को असमर्थ पाती है। प्रायः अत्यधिक कुण्ठा में वो अपने अन्दर कोई बड़ा असाध्य रोग भी पाल लेती है। वेश्या जीवन का कुछ ऐसा ही एक यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत करते हुए कवि मृत्युंजय उपाध्याय ने लिखा है :–

गर्भ में अज्ञात पिता का अंश,
फेफड़ों में टी.वी. की गमक ।''

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 13, May 2026 Impact Factor: 8.2

वेश्या जीवन की दयनीय दशा व असहनीय वेदना को व्यक्त करते हुए'अंचल' जी ने लिखा है:–

किन्तु कहाँ वह उदर भरा रह पाता है सुख से दो दिन,
पीसा करते है पिशाच दे रोटी के टुकड़े गिन–गिन,
माता बनी दूध भर आया, किन्तु न भरता पापी पेट,
जननी बनकर भी पशुओं के आगे नग्न सकेगी लेट।''

समाज में देखा जाय तो वेश्या को समाज का कलंक समझा जाता रहा है, लेकिन वास्तविकता क्या है? इस पतित जीवन का उत्तरदायी कौन है? इसका उत्तरदायी यही समाज है जो उसे कलंकित कहता है। प्राचीन काल से ये परम्परा चली आ रही है। नारियों का अपमान, अवहेलना, व प्रताड़ना की पीड़ी को सहती हुई चली आ रही है। पुरुष एक से अधिक स्त्रियाँ रख सकते थे, परन्तु अपने पति की मृत्यु के पश्चात् एक नव युवती भी विधवा के रूप में समाज में घृण्य समझी जाती थी। पुनर्विवाह तो दूर उसे शुभ कार्यों में शामिल करना भी पसन्द नहीं किया जाता था। उसे अपना समस्त जीवन अपने मृत पति के परिवार वालों के साथ कटुवचन वाणों को सहते हुए व्यतीत करना पड़ता थाऔर वे पति के साथ उसकी चिता में ही जला दी जाती थी। ऐसे में ही त्रस्त होकर जब वह किसी गलत व्यक्ति के आडम्बर पूर्ण आचरण में फँसकर उसके साथ भाग जाती है तो वही व्यक्ति अपनी कुटिल चाल से उसे विधर्मी बनाकर वेश्यालय तक पहुँचा देता है।

'वेश्या कविता में कवि 'शील' ने समाज में वेश्या के रूप में जानी जाने वाली एक सौन्दर्यवान् नारी एवं उसकी आन्तरिक प्रकृति का यथार्थ प्रस्तुत करते हुए लिखा है :–

''उन्नत उरोज, कंचुकी कसी, सुन्दरता की मूर्ति बनी,
बैठी, उस मंजिल पर सौन्दर्य बेंचती नारी।

वेश्या का जीवन जीने और इनके बढ़ाने में तत्कालीन समाज के एक सबसे महत्वपूर्ण कारण गरीबी था। पूँजीपति एंव जमीदारलोग अपनी वासना पूर्ति के लिए उनकी गरीबी का भरपूर फायदा उठाते थे और उन्हें विधर्मी बना देते थे। ऐसी कुछ स्त्रियाँ तो खुले रूप में वेश्यावृत्ति को अपना धंधा बना लेती थीं, तो बहुत सी स्त्रियाँ समाज भय के कारण खुले रूप में तो वेश्यावृत्ति नहीं करती थीं, परन्तु अपनी मजबूरियों के कारण कभी–कभी उन्हें कामुक नरों की वासनापूर्ति करनी पड़ती थी। शील जी कहते हैं:–

किन्तु हुई फिर भी क्या,
उसके उदर की पूर्ति,
कामुक नरों ने चुभाई तेज छुरियाँ,
मृत–सी, शोक में, विषाद में पड़ी रही।''

वेश्या जीवन से प्रथम दलित जीवन जीने वाली खानबदोश व जरामय पेशाकंजरिया का चित्र खींचते हुए रांगेय राघव जी ने लिखा है :–

कर पग में पीतल के गहनें, बिछिया और ताली बजा–बजा,
वह गाती है सुख–दुख पहने, गा रही विचारी घूम–घूम ।

नारी के शोषण के सम्बन्ध में प्रगतिवादी दृष्टि सामान्य नारी के शोषण की ओर ही नहीं थी, अपितु सभ्य समझे जाने वाले समाज में रहने वाली नारियाँ का शोषण हुआ करती थी, जिनका उल्लेख कवियों ने किया है। इन्हीं आधुनिक वर्ग की नारियों में एक वर्ग अभिनेत्रियों का है जो वास्तव में नकली जीवन जीते हैं। इन्हीं से कुछ अभिनेत्रियों को 'एक्स्ट्रा कहा जाता है। उन्हें न तो सम्मान ही मिलता है और न शुद्ध पारिश्रमिक ही। साथ ही इन्हें उस संसार में बने रहने व आगे बढ़ने के लिए अधिकतम शारीरिक शोषण के दौर से भी गुजरना पड़ता है। एक 'एक्स्ट्रा' के जीवन के दर्द को व्यक्त करते हुए विजयचन्द्र जी ने लिखा :–

चौपाटी पर खरीद पी डाले गये,
नारियल के असंख्य खोखो–सी,
चना जोर गरम की खाली पुड़ियों की डेरी सी,
जिनमें चने भरे जाते हैं/पर जो स्वयं चने नहीं हैं।''

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 13, May 2026 Impact Factor: 8.2

i:dfr fp=&

किसी भी समाज का मूल ढ़ॉचा का निर्धारण उसकी प्रकृति का विशेष योगदान होता है।प्रकृति मानव की आदि सहचरी है और अनादिकाल से ही कवि समुदाय प्रकृति से काव्य–सृजन की प्रेरणा लेते रहें हैं। इतिहास साक्षी है कि भारतीय साहित्य के महान कवियों जैसे कालीदास, वाल्मीकि आदि की अमर वाणी में प्रकृति वर्णन ने महत्वपूर्ण स्थान पाया है। ये कवि कभी प्रकृति के निर्मल सौंदर्य पर मुग्ध हुए तो कभी प्रकृति के उपयोगितावाद की तरफ इनका ध्यान गया। अनेक कवियों ने प्रकृति का बहुत ही अच्छा वर्णन भी किया है।यह सिलसिला सदियों से साहित्य में अनवरत विद्यमान रहा और आधुनिक काल में भी कवि प्रकृति से सर्जनात्मक सामग्री ग्रहण करते हैं।

हिन्दी के आधुनिक काल के काव्य में विभिन्न धाराओं एवं प्रवृत्तियों का उद्‌भव एवं ह्रास समय के साथ होता रहा है। आरंभिक रचनाओं में प्रकृति का चित्रण कथानक को बिम्ब रूप देने के लिए सामान्यतया प्रयुक्त किया जाता था जो मध्यकाल की युद्धरत अवस्थाओं के चित्रण के समय बदल गया। आधुनिक काल के आरंभ में उत्तर–मध्यकालीन काव्य शैलियों का प्रभाव रहा पर उसके बाद वैष्विक स्तर पर हुए साहित्यिक आदान–प्रदान के कारण भारत में भी काव्य सृजन में गुणात्मक परिवर्तन आया। भारत में इसी वैश्विक प्रभाव के कारण 1930 के बाद प्रगतिशील साहित्य आंदोलन से प्रेरित रचनाओं का सृजन होने लगा। यहां यह गौरतलब है कि इस समय भारत में छायावादी काव्य–प्रवृत्ति का जोर था। इधर प्रगतिशील साहित्य का प्रभाव बढ़ने के बाद छायावादी काव्य धीरे–धीरे अवसान की ओर जाता रहा। हालांकि छायावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्ति प्रकृति चित्रण को प्रगतिवादी कवियों ने अपनी कविताओं में स्थान अवष्य दिया। इस चित्रण में छायावादी काव्य की भांति प्रकृति के कोमल एवं मनोहारी दृष्यों के सहारे भाव अंकन करना नहीं था, अपितु प्रगतिवादी कवियों ने प्रकृति को मानव जीवन पर गहरा प्रभाव छोड़ने वाली सहचरी शक्ति के रूप में स्वीकार किया। इन कवियों में प्रमुख कवि केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति के विविध रूपों का यथार्थ और सुंदर रेखांकन किया गया है।

कवि केदारनाथ अग्रवाल उत्तर प्रदेश के बांदा जिले के कमासिन गांव के रहने वाले थे। ग्रामीण परिवेश में जन्मे होने के कारण उनका प्रकृति से लगाव गहरा ही था। वे प्रकृति में प्रत्येक तत्व से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से गहरा सम्बन्ध रखते थे। केदार के काव्य में ग्रामीण भावनाएं एवं प्राकृतिक सौंदर्य का सजीव चित्रण मिलता है। वे नदी से लेकर सूरज–संध्या आदि का जीवंत चित्रण करने में निष्णात हैं और उनके काव्य में खेत–खलिहानों का वास्तविक उल्लास और फसलों का मनोहारी चित्रण किया गया है। उनकी रचनाओं में मानव एवं प्रकृति के सौंदर्य का सहज, वेगवान तथा उन्मुक्त रूप मिलता है। हालांकि उनकी शुरूआती रचनाओं में छायावाद का प्रभाव दिखता है।

प्रकृति के प्रति केदार का झुकाव स्वाभाविक रूप से रहा है। उन्हें प्रकृति अपनी तरफ आकृष्ट करती रही है, उनको कभी प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य ने अपनी ओर खींचा है, तो कभी मानव–जीवन के हर्ष–विषाद को रूपायित करने के लिए केदार ने प्रकृति के उपदानों का प्रयोग किया है। मानव–जीवन की पृष्ठभूमि को केन्द्र में रखते हुए केदार ने प्रकृति के अधिकांष चित्र खींचे हैं। केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति को नवीन तरीके से अभिव्यक्ति मिली है। प्रकृति के प्रति केदार का दृष्टिबोध पूर्व की हिंदी कविता से किंचित भिन्न और नवीनता लिए हुए है।

केदारनाथ अग्रवाल के काव्य में प्रकृति–चित्रण विराट पृष्ठभूमि के साथ एवं विविध रूपों में उकेरा गया है। केदार का प्रारंभिक रूप प्रकृति कवि के रूप में सामने आता है और 'युग की गंगा' से लेकर 'कुहकी कोयल खड़े पेड़ की देह' कविता–संग्रहों में उनकी अधिकतर कविताएं विषय की दृष्टि से प्रकृतिपरक हैं। उनके कविता संकलनों में चौदह के शीर्षक प्राकृतिक सौंदर्य व उसके उपकरणों के आधार पर रखे गए हैं। जैसे– 'नींद के बादल', 'लोक और आलोक', 'जमुन जल तुम', 'पंख और पतवार', 'फूल नहीं रंग बोलते हैं', 'गुलमेंहदी', 'अनहारी हरियाली', 'पुष्पदीप', 'वसंत में प्रसन्न हुई 'पृथ्वी', 'कुहकी कोयल खड़े पेड़ की देह' आदि काव्य–संग्रहों के नामकरण प्रकृति से कहीं न कहीं परोक्ष रूप से जुड़े हैं।

प्रकृति चित्रण करते समय केदार किसी खास शैली से बंधे हुए नहीं रहे और उन्होंने इस चित्रण में परम्परागत और सामयिक शैली का उत्कृष्ट संतुलन स्थापित किया है। आधुनिक काल की कविताओं में प्रकृति चित्रण की कई शैलियां प्रचलित हैं, जिनमें से केदारनाथ अग्रवाल ने मुख्यतः इन शैलियों का अपनाया है आलम्बन रूप में प्रकृति चित्रण, उद्‌दीपन रूप में प्रकृति चित्रण, वातावरण निर्माण के रूप में प्रकृति चित्रण, रहस्यात्मक रूप में प्रकृति चित्रण, प्रतीकात्मक रूप में प्रकृति चित्रण और मानवीकरण रूप में प्रकृति चित्रण। उनके द्वारा चित्रित प्रकृति के विविध रूपों के चित्रण की संक्षिप्त विवेचना इस प्रकार है

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 13, May 2026 Impact Factor: 8.2

vkyEcu : i

इसका व्यापक अर्थ है कि जब प्रकृति के समस्त पदार्थ कवि के रतिभाव के स्वतंत्र आधार का रूप ग्रहण करके उसकी अंतःसत्ता पर सम्पूर्ण प्रभाव स्थापित कर लेते हैं तो काव्य का यह रूप प्रतिष्ठित होता है। प्रकृति के आलम्बन रूपों का चित्रण करते समय कवि की निज दृष्टि प्रकृति की रूप राषि में समाहित हो जाती है। केदार ने प्रकृति को आलम्बन रूप में अनुभूत करके अपने काव्य में प्रकृति के संष्लिष्ट और भव्य चित्र उकेरे हैं, जिनमें प्रकृति अपने मनोहारी रूप में दृष्टिगोचर होती है। 'चंद्रगहना से लौटती बेर' शीर्षक कविता में कवि ने ग्रामीण कृषक जीवन की सुंदर एवं सजीव अभिव्यक्ति दी है। कवि को पीली सरसों हाथ पीले किए हुए मंडप में पधारी नवविवाहिता की तरह प्रतीत हो रही है।

केदार प्रकृति के सूक्ष्म मानसिक सौंदर्य के स्थान पर उसे व्यवहारिक रूप से चित्रित करते हुए मानवीय स्वभाव से जोड़ते हैं। हिन्दी साहित्य की छायावादी कविता में प्रकृति चित्रण एन्द्रिय अनुभूति से अनुभूत न करते हुए काल्पनिकता के सहारे किया गया है, जबकि केदार के काव्य में प्रकृति जीवन संघर्षों में सारथी बनकर उभरी है और किसी साथी की भांति निज ज्ञान और अनुभव से प्रेरणा भी देती है। केदार के काव्य में चित्रित प्रकृति क्षणिक अनुभवजन्य नहीं है बल्कि उसमें युग का समर्पण मिलता है। उनकी एक कविता 'सावन का दृष्य' में वर्षा ऋतु में किसान के जीवन सौंदर्य का अनूठा चित्रण मिलता है–

'मोती जैसी बूंदें बरसीं,
धरती पर जलधारा बरसी,
झाग भरे लाखों मटमैले,
फन फैलाए अहिगन सरके।

उक्त कविता में बादल मात्र आलम्बन रूप में नहीं हैं अपितु उनका आगमन और बरसना किसानी जीवन की आस और उत्साह का भाव जगाता है। केदार प्रकृति समस्त गतिविधियों में जीवन की गतिषीलता देखते हैं। उनके काव्य में प्रकृति जीवंत शरीर की भांति उपस्थित होती है। ऐसा ही एक उदाहरण उनकी कविता 'बसंती हवा' में देखा जा सकता है जो अतुकांत शैली की होते हुए भी गीति काव्य का सा आनंद प्रदान करती है। उनके काव्य में 'हवा' अनेक रूपों में उपस्थित हुई है। वह कभी स्वछंद रूप में, तो कभी वेगवान अंधड़ के रूप में आई है। कवि हवा की सुंदरता और कमनीयता से प्रभावित हैं तो दूसरी ओर उसकी असीम शक्ति से भी अवगत हैं।

कवि केदार की रंग–भावना का विस्तार और सूक्ष्मता उनके प्रकृति के प्रति अनुराग का प्रमाण है। प्रकृति को सरसरी दृष्टि से देखने वाले कवि प्रकृति के मौलिक और स्थूल रंगों का चित्रण मात्र करते हैं पर कवि केदार प्रकृति के विविध रंगों, भेदों और मिश्रणों का मूर्त वर्णन करते हैं। इन प्रकृतिवर्णनों में चित्रित रंगों में प्रकृति का रूप मानव की सहयोगिनी के रूप में उकेरा गया है। केदार के काव्य में सूर्योदय और दिन का उजाला अनेक कविताओं में अभिव्यक्त हुआ है। उनकी दृष्टि में सूर्योदय जागरण और साम्यवादी क्रांति का प्रतीक है। सूर्योदय के उपरांत अंधेरा पलायन कर जाता और जीव–जगत की जड़ता समाप्त हो जाती है।

"kks/k fu'd'k :–

प्रगतिवादी कवियों की कविता किसी न किसी रूप में प्रकृति से भी संबद्ध रही है। जाहिर है कि मनुष्य प्रकृति–पुत्र है, प्रकृति की गोद में ही वह पला पोशा है, इसीलिए वह सहज ही प्रकृति की ओर आकर्षित होता है । प्रगतिवादी काव्यधारा के कवियों के प्रकृति चित्रण में प्रकति न तो काल्पनिक कोमल रूप में और न ही उद्दीपन विभाव रूप में दिखाई देती है बल्कि प्रकृति सहज, निश्छल, मूर्त और जीवंत रूप में है। इन कवियों ने व्यापक जन–जीवन से संबद्ध प्रकृति के अनेक चित्र खींचे हैं। इन कवियों ने अपने प्रकृति चित्रण में प्रकृति के सुंदर चित्र खींचने के स्थान पर प्रकृति का वृद्ध रूप ही दिखाया है तथा ग्रामीण सभ्यता का चित्रण किया है। लोकजीवन के परिप्रेक्ष्य में ही प्रकृति चित्रण किया है। कहीं–कहीं प्रकृति वर्णन में कवियों ने प्रतीकात्मकता का प्रयोग किया है। शिवमंगल सिंह 'सुमन' की 'निर्झर' कविता में प्रकृति के प्रतीकात्मक रूप का चित्रण किया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. उद्धत–शर्मा, डॉ0 रमाकान्त, समाजोन्मुख यर्थाथवादी काव्य।
2. उद्धत–डॉ0 हंस, प्रगतिवादी काव्य साहित्य।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 13, May 2026
Impact Factor: 8.2

3. उद्धत–ग्राम्या, ग्राम दृष्टि।
4. उद्धत–सिंह, डॉ0 अजित, प्रगतिवादी काव्य उद्‌भव और विकास।
5. उद्धत– श्रीवास्तव,डॉ0 विनोदनी निराला साहित्य में जीवन दर्शन।
6. अग्रवाल, केदारनाथ फूल नहीं, रंग बोलते हैं।
7. उद्धत–शर्मा,डॉ. रामविलास रूपतरंग और प्रगतिशील साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि।
8. उद्धत–विश्वास बढ़ता ही गया, इन गीतों के लिए तुम्हारा।
9. उद्धत–युगधारा, प्रेत का बयान।
10. उद्धत– डॉ0 रणजीत, हिन्दी की प्रगतिशील कविता।
11. देखिए –युगवाणी, मध्यवर्ग
12. उद्धत–डॉ0 रणजीत, हिन्दी की प्रगतिशील कविता।
13. उद्धत– धूप के धान, शाम की धूप,

*****